Research Reinforcement | A Peer Reviewed International Refereed Journal | ISSN 2348-3857
Impact Factor (IIJIF): 5.454 | Vol. 8, Issue 1 | May. 2020 - October 2020 | pp. 133-139

पंचायतीराज व्यवस्था से महिला सशक्तिकरण : विमर्श एवं यथार्थ

डॉ. हनुमान प्रसाद मीना
सह आचार्य, राजनीति विज्ञान
शहीद कैप्टन रिपुदमन सिंह राजकीय महाविद्यालय सवाई माधोपुर (राजस्थान)

शोध सारांश

महिला सशक्तिकरण आज की आवश्यकता है तो पंचायतीराज उसे प्राप्त करने का एक माध्यम है जिस पर चल कर भारत की ग्रामीण महिलाओं ने अनेक उपलब्धियाँ अर्जित की हैं किन्तु मात्र निचले स्तर पर उन्हें थोड़ा सा आरक्षण देकर किसी चमत्कार की उम्मीद बेईमानी है। अत: आज आवश्यकता इस बात की है कि महिलाएँ अपने सुषुप्त सर्वोत्तम को शिक्षा के माध्यम से उजागर करें। यदि नारी ने अपने सर्वोत्तम के विकास के लिए आवश्यक साधनों को नहीं अपनाया तो महिला सशक्तिकरण दम तोड़ देगा और उसके अभाव में देश, राष्ट्र, व समाज भी अशक्त रह जाएगा। नारी अपने गर्भ में भविष्य को संजोकर रखती है। यदि आज की नारी शिक्षित, स्वस्थ, स्वावलम्बी व जागरुक होगी तभी भविष्य सशक्त होगा।

संकेताक्षर : *स्वावलम्बी, सहभागिता, सशक्तिकरण, आत्मनिर्भरता, पितृसत्तात्मक, समतापरक कानून, चक्रानुक्रम*

प्रस्तावना

भारत में महिला सशक्तिकरण का प्रश्न पिछले दशकों में सार्वजनिक मंचों पर एक महत्वपूर्ण प्रश्न के रूप में उठा है। संतुलित एवं न्यायपूर्ण सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक संरचना एवं विकास में जन-आबादी के आधे भाग की सक्रिय सहभागिता की उपेक्षा नहीं बल्कि उसे सुनिश्चित करने की आवश्यकता है। इस बात पर अब आम सहमति है।[1] यह भी स्पष्ट है कि स्त्री पुरुष असमानता के बीज प्रकृति में नहीं अपितु समाज, संस्कृति, राजनीति एवं अर्थव्यवस्था की संरचनाओं में उपजे हैं। महिला सशक्तिकरण इन प्रचलित शक्ति संरचनाओं एवं शक्ति समीकरणों के विरुद्ध वैचारिक एवं व्यवहारिक धरातलों पर विद्रोह है। साथ ही यह तर्क नारी सामानता उसकी गरिमा एवं विकास के पक्ष में ऐसी वैकल्पिक संरचना का पक्षधर है जिसमें स्त्री सभी क्षेत्रों में एवं सभी स्तरों पर एक सशक्त एवं समर्थ अभिकर्ता के रूप में सक्रिय हो। महिला सशक्तिकरण के अनेक निहितार्थ है।सैद्धान्तिक स्तर पर उदारवादी,नवउदारवादी,मार्क्सवादी, नवमार्क्सवादी, मानववादी एवं महिला दृष्टियाँ उपलब्ध है। व्यवहारिक धरातल पर सामान्यतया सशक्तिकरण का अभिप्राय, सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, वैयक्तिक -सभी क्षेत्रों में प्रभावी हस्तक्षेप की क्षमता से लिया जाता है। इसके लिए संरचनात्मक स्तर पर संसाधनों तक पहुँच आवश्यक है तथा वैयक्तिक स्तर पर चेतना, आत्मविश्वास एवं आत्मनिर्भरता महत्वपूर्ण है। उन कारणों की समीक्षा भी समीचीन है जो आम महिलाओं की शक्तिहीनता के मूल में हैं। अवश्य ही शक्तिशाली, प्रभावी महिला व्यक्तित्वों के दृष्टान्त भी उपलब्ध हैं। इसीलिए सशक्तिकरण की किसी भी चर्चा में व्यक्तिगत के साथ-साथ सामूहिक परिवर्तन की दृष्टि आवश्यक है। नारीवादी दृष्टि ने पितृसत्तात्मक सोच से लेकर आर्थिक शोषण एवं राजनीतिक शक्ति के आधिपत्य की संरचनाओं को प्रश्नचिन्हित किया है।[2]

भारतीय संस्कृति में प्राचीन काल से ही नारी को विभिन्न दैवीय रूपों में वर्णित किया गया है। जैसे, शिक्षा की देवी सरस्वती, शक्ति की देवी रूपादुर्गा एवं आर्थिक सम्पन्नता की सूचक लक्ष्मी। नारी को इन रूपों में पूजा गया है। लेकिन व्यावहारिक धरातल पर महिलाओं की स्थिति को देखते हैं तो ऐसा लगता है कि इन सारे दैवीय रूपों में नारी वर्णन पाखण्ड व आडम्बर युक्त है क्योंकि जिसे शिक्षा की देवी सरस्वती का रूप दिया गया है उसे शिक्षा से वंचित रखा गया है। जिस नारी को लक्ष्मी माना गया है उसे ही

सम्पत्ति या आर्थिक अधिकारों से वंचित रखा गया है तथा जिसे शक्तिरूपा दुर्गा के रूप में पूजा जाता है उसे ही शक्ति साधनों से वंचित रखा गया है।[3]

महिला सशक्तिकरण का अर्थ

सशक्तिकरण की प्रक्रिया एक बहुआयामी प्रक्रिया है महिला सशक्तिकरण का आशय महिलाओं की उन क्षमताओं एवं शक्तियों में वृद्धि से है, जिससे वे स्वयं निर्णय लेने की स्थिति में आ सकें।[4] वस्तुत: नारी सशक्तिकरण का प्रश्न बहुआयामी है[5] किन्तु मूल रूप में यह महिलाओं के बुनियादी मानव अधिकारों का प्रश्न है। लोकतांत्रिक मानकों के अनुरूप यह महिलाओं के मूल लोकतांत्रिक अधिकारों का भी प्रश्न है।

शरीर, विचार, संसाधन, निर्णय प्रक्रिया पर नियंत्रण सशक्तिकरण है। शक्ति संतुलन को बदलना सशक्तता है।[6] वर्तमान भारत में गत कुछ वर्षों में अनेक मंचो से यह प्रश्न इसलिए उठा है कि विगत पाँच दशकों में देश में लोकतंत्र की अनेकानेक उपलब्धियों के बावजूद आधी जनआबादी को जो दर्जा मिलना चाहिए था वह उससे वंचित है।

महिला सशक्तिकरण एक विश्व व्यापी विचारणीय बिन्दु है, जो महिला अधिकार आन्दोलनों के अग्रिम मोर्चे पर रहा हैं।[7] सम्पूर्ण विश्व में महिलाएं सदियों से दोयम दर्जे की नागरिक समझी जाती रही हैं। यद्यपि उनकी प्रसंशा में गीत भी रचे गये, कवियों, कथाकारों की लेखनी, चित्रकारों की तूलिका ने उनके सौंदर्य, कमनीयता, देवत्व, ममता, सहनशीलता, करुणा आदि के अनेक भावचित्र उकेरे लेकिन सृष्टि के संसाधनों में समान भागीदारी उसे कभी प्राप्त नहीं हुई। विश्व के नारी समाज ने सदा से ही अपने को सामाजिक, धार्मिक, विधिक, शैक्षणिक, आर्थिक व सांस्कृतिक हर क्षेत्र में उपेक्षित समझा और उनको यह पीड़ा सदा से ही संवेदित करती रही कि उसे पुरुष के अधीन ही परतंत्र, पराश्रमी, पराधीन जीवन क्यों जीना पड़ता है[8] लेकिन इन परिस्थितियों में परिवर्तन आया। विश्व के वे देश जहां स्वतंत्रता तथा समानता जैसे लोकतंत्र के आधारभूत सिद्धान्त स्वीकार व प्रयोग किये जा रहे थे वहाँ जागृत चेतना के फलस्वरूप महिलाओं की स्थिति से सम्बन्धित प्रश्न उठने लगे तथा उनकी स्थिति को बेहतर करने की दिशा में प्रयास होने लगे।

महिलाओं को भी मानव होने के नाते वे सभी अधिकार प्राप्त होने चाहिए जो पुरुषों को प्राप्त हैं। जॉन स्टुअर्ट मिल ने अपनी पुस्तक ''ऑन द सब्जेक्शन ऑफ वुमन' में महिलाओं के अधिकार, विशेषकर राजनीतिक अधिकार यानी मत देने के अधिकार के पक्ष में अपने तर्क प्रस्तुत किये हैं। सिमोन दी वुवा ने 'द सेकिन्ड सेक्स' में कहा कि महिलाओं की स्थिति प्राकृतिक कारणों से नहीं अपितु सामाजिक करणों से निर्धारित होती है। बेट्टी फाईडन की पुस्तक 'द फेमिन मिस्टिक' ने महिलाओं के घरेलू भूमिका तक सीमित रहने से होने वाले अवसाद व कुंठा को इंगित करते हुए उनकी शिक्षा व बाहर के कामकाज में भागीदारी की ओर ध्यान आकर्षित किया। उन्होंने अपनी अगली पुस्तक 'द सेकेंड स्टेज' में इस परिवर्तन से बच्चों, परिवार व घर पर होने वाले दुष्प्रभावों की ओर भी चेताया। केट मिलेट ने अपनी पुस्तक ''सेक्सुअल पॉलिटिक्स' में पितृसत्तात्मक व्यवस्था पर चेतना जागृति के द्वारा आघात करने का आह्वान किया।

भारतीय संविधान स्त्री एवं पुरुषों को पूर्ण समानता प्रदान करता है। महिलाओं को उपलब्ध संवैधानिक तथा वैधानिक संरक्षण एवं समानता को दीर्घकालीन स्वाधीनता संग्राम एवं महिला आंदोलन की उपलब्धि के रूप में देखा जाना चाहिए।[9] यह सच है कि पिछले पचास वर्षों में महिलाओं ने लोकतंत्र के आधारभूत अधिकार, मताधिकार का प्रयोग किया। शासन व्यवस्था ने उनकी बेहतरी के लिए विभिन्न पंचवर्षीय व एकवर्षीय योजनाओं में कार्यक्रम भी बनाये जिसका लाभ उन्हें मिला। जीवन के विविध क्षेत्रों में न केवल उन्होंने प्रवेश किया बल्कि अपनी कुशलता तथा योग्यता का परिचय भी दिया। प्रारम्भ में प्रयास सुधारात्मक व कल्याण की भावना से प्रेरित थे पर यह कदम अपूर्ण अनुभव होने पर आर्थिक आत्मनिर्भरता पर जोर दिया गया। इस प्रयास को भी अपर्याप्त मानते हुए अंतत: राजनीतिक सशक्तिकरण पर जोर दिया गया। पर 1974 में प्रकाशित ''समता की ओर''[10] में महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक स्थिति के अध्ययन के पश्चात् कोई सकारात्मक चित्र प्रस्तुत नहीं हुआ। यदि महिलाओं की लोकतंत्र में भागीदारी की बात करें तो आज तक वे लोकसभा व विधानसभाओं में 10 प्रतिशत भागीदारी का आंकड़ा पार नहीं कर पाई हैं। मतदाता के रूप में भी उनकी भागीदारी निष्पक्ष, निर्भिक तथा सजग नहीं रही है। यही कारण है कि 73वें व 74वें संविधान संशोधन के माध्यम से ग्रामीण व नगरीय स्थानीय शासन में 33 प्रतिशत आरक्षण के द्वारा उनकी भागीदारी सुनिश्चित की गई है।[11] लेकिन अभी भी पंचायतीराज संस्थाओं में महिलाएं विभिन्न पदों पर अपनी सार्थक भूमिका नहीं निभा पा रहीं हैं। क्योंकि उनके अवरोध में परिवार, समाज तथा राजनीतिक व्यवस्था एक साथ खड़ी है। इन बाधाओं को पार करके भी कुछ महिला जन प्रतिनिधियों ने आश्चर्यजनक रूप से अपनी कार्यक्षमता का परिचय दिया जिसके लिए उन्हें पुरस्कार भी प्राप्त

हुए, पर संसद व विधानसभा में महिलाओं के 33 प्रतिशत आरक्षण से सम्बन्धित विधेयक अभी भी संसद में प्रस्तुत ही नहीं हो पाया है। यह तथ्य भारतीय समाज में पुरुष वर्ग की विशिष्ट मानसिकता का परिचायक है।

कानून व विधान चाहे कितना भी आदर्शात्मक क्यों न हो उसका क्रियान्वयन यदि अनुकूल न हो तो वांछित परिणाम नहीं आ सकते। सम्पूर्ण समाज व्यवस्था पुरुष केन्द्रित है। ऐसे में कानून बनाने वाले, उसे क्रियान्वित करने वाले तथा उस पर फैसला देने वाले पुरुष ही हैं जिनकी सदियों पुरानी मान्यताओं में कोई परिवर्तन नहीं आया है।[12] अत: समतापरक कानून के क्रियान्वयन की जब बात उठती है तो सारे सिद्धान्त व आदर्श धराशाही हो जाते हैं। इस दिशा में विभिन्न धर्मों व पंथों की भूमिका भी महिलाओं के हित में नहीं रही है। जो नेता, पुलिस वाले, पुजारी, पण्डे और लेखक-विचारक अपने परिवार के भीतर घोर सामंतवाद चलाते हैं। हम उनसे यह उम्मीद कैसे करें कि वे लोकतंत्र की मर्यादा की रक्षा करेंगे समाज का आधा वर्ग दूसरे आधे वर्ग को समानता का सम्मान, सिद्धान्त रूप में नहीं देना चाहता तो फिर व्यवहार में कैसे दे सकता है। यही कारण है कि नीतियाँ जो कि जन इच्छाओं व मांगों का प्रत्युत्तर हैं महिलाओं के पक्ष में बनती ही बड़ी कठिनाई से है। यदि बन जाती है तो उनका क्रियान्वयन सुउद्देश्य व सद्इच्छा से नहीं होता है और यदि क्रियान्वयनकर्ता इस दिशा में ईमानदारी का परिचय देना भी चाहें तो उचित समय पर पर्याप्त धन राशि प्राप्त नहीं होती है। ऐसा भी होता है कि धनराशि मिल जाये तो सही तरीके से तथा वांछित उद्देश्य पर व्यय करने की दृढ़ इच्छा शक्ति का अभाव देखा गया है। ''किसी ने कहा है प्रजातंत्र क्या है यह पुरुष प्रधान, पुरुष के लिए, पुरुष द्वारा, पुरुष का शासन विधान तंत्र है। जिसमें विभिन्न उक्तियाँ, पद्धत्तियाँ, शैलियाँ, पुरुष आविष्कृत करता है, ताकि उसकी सत्ता, अधिशासिता बनी रहे और उसका एक छत्र वर्चस्व समाज पर चलता रहे। ऐसे में प्रश्न उठता है कि स्थितियों को वांछित दिशा में मोड़ने के लिए प्रयास कहाँ से प्रारम्भ किया जाये। मृणाल पांडे का मानना है कि ''स्त्री से सही सम्बन्ध की शुरुआत ही दर असल लोकतंत्र की शुरूआत हो सकती है जो वोट के बूथ से नहीं घर के आँगन से होगी।''

देश की जनसंख्या का एक बड़ा भाग गाँवों में बसता है। जनसंख्या वृद्धि व शहरीकरण के बढ़ते प्रभाव ने गाँवों व ग्रामीण उद्योगों की अवनति की है। गाँव अपना अस्तित्व खोने लगे हैं। और आज वहाँ भी गरीबी, दरिद्रता, अशिक्षा, कुपोषण तथा कुरीतियों का बोलबाला है। यद्यपि सरकार द्वारा समय-समय पर ग्रामोद्धार के प्रयास किये जाते रहे हैं किन्तु उसका सम्पूर्ण लाभ गाँवों को नहीं मिल पाता है और इसका सबसे ज्यादा खामियाजा ग्रामीण महिलाओं को भुगतना पड़ता है।

यद्यपि शहरों में रहने वाली महिलाओं को अपने विकास के ग्रामीण महिलाओं की अपेक्षा अनुकूल अवसर मिलते रहते हैं किन्तु ग्रामीण महिलाओं को शिक्षा, आर्थिक विकास, सामाजिक सुरक्षा, सशक्तिकरण, पोषाहार व भविष्य की उन्नति के समुचित अवसर नहीं मिल पाते हैं और इसी कारण वे निम्नस्तरीय जीवन व्यतीत करने को मजबूर रहती हैं। विकास के अवसरों के अभाव में वे घर की चारदीवारी में अपना जीवन गुजारती है।[13] गाँवों में जहाँ आज भी पितृप्रधानता, अशिक्षा, रूढ़िवादिता, अंधविश्वासों का बोल-बाला है, पारिवारिक, सांस्कृतिक, सामाजिक तथा परम्परागत मूल्यों की बाधाएं उनके विकास में अवरोधक हैं। अशिक्षा, अज्ञानता तथा जागरुकता की कमी के चलते महिलाएं उत्पीड़न उपेक्षा व हिंसा का शिकार होती हैं। गाँवों में आज भी स्वच्छ पेयजल, समुचित निकासी, स्वास्थ्य केन्द्रों, प्रकाश की समुचित व्यवस्था इत्यादि का अभाव पाया जाता है। जो उनके सामाजिक-आर्थिक जीवन को प्रभावित करता है। परिवार व समाज में उन्हें आज भी पुरुषों के समान अधिकार व स्थान नहीं मिल पाया है। घरेलू कामों, बच्चों के लालन-पालन के साथ-साथ वे कृषि कार्यों, कुटीर उद्योगों में भी पुरुषों का हाथ बंटाती हैं किन्तु उनका यह श्रम कहीं दर्ज नहीं होता और राष्ट्रीय आर्थिक नीति के मूल्यांकन में महत्व पाने से वे उपेक्षित रह जाती हैं। यद्यपि कुछ महिलाएं मजदूरी करती हैं, किन्तु उन्हें वहाँ भी पक्षपात का शिकार होना पड़ता है।

73वें एवं 74वें संविधान संशोधन के माध्यम से पंचायतीराज[14] एवं स्थानीय निकायों में महिलाओं को दिए गए आरक्षण के फलस्वरूप लगभग 10 लाख महिलाओं की राजनैतिक भागीदारी सशक्तिकरण की दिशा में मील का पत्थर है।

73वें संविधान संशोधन के माध्यम से 1995 से लेकर 2010 तक के पंचायत चुनावों में एक अनुमान के आधार पर लगभग 30 लाख महिलाएं जिसमें दलित व आदिवासी महिलाएं भी सम्मिलित हैं, स्वशासन में भागीदारी कर चुकी हैं। पंचायती व्यवस्था में महिला सशक्तिकरण की दिशा में नवीन क्रान्ति का सूत्रपात हुआ है जिसने महिलाओं को न केवल पुरुषों के समान अधिकार दिलाने की पहल की है बल्कि उनके विकास के लिए संसाधनों की उपलब्धता को भी सरल बनाया है। वास्तव में महिला सशक्तिकरण मात्र एक विकासात्मक कार्यक्रम न रहकर एक प्रगतिशील आंदोलन बन गया है और किसी भी आंदोलन की प्रगतिशीलता का अनुमान उसमें सम्मिलित महिला शक्ति से लगाया जाता है।

पंचायतीराज अर्थात् स्थानीय स्वशासन का मूल केन्द्र बिन्दु महिला सशक्तिकरण के माध्यम से गरीबी को दूर करना है और यह कार्य पंचायती राज को सशक्त करके ही किया जा सकता है। इस व्यवस्था में महिलाओं को केन्द्र बिन्दु माना गया है क्योंकि ग्रामीण महिलाओं का सर्वांगीण सशक्तिकरण ही गाँवो से गरीबी हटाने में सहायक हो सकता है।

इस क्षेत्र में यद्यपि सरकार ने व्यापक कदम उठाए हैं किन्तु जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक व क्षेत्रीय कारकों पर भी निर्भर करती है। आधी आबादी होने के कारण वे देश के महत्वपूर्ण श्रम का एक बड़ा भाग है और उनकी सक्रिय व पूर्ण भागीदारी के बिना उनके विकास व गरीबी उन्मूलन के लक्ष्य को नहीं प्राप्त किया जा सकता। समाज परिवार, देश व स्वयं महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक प्रगति में पंचायतीराज महिला सशक्तिकरण का एक सशक्त माध्यम है और महिला सशक्तिकरण का महत्व समझते हुए ही वर्ष 2001 को ''महिला सशक्तिकरण वर्ष'' या ''महिला अधिकार सम्पन्नता वर्ष'' घोषित किया गया था। इसी प्रकार पंचायतीराज में महिलाओं की भागीदारी को महिला राजनीतिक सशक्तिकरण दिवस के रूप में मान्यता प्रदान की गई है जो इसी नाम से प्रत्येक वर्ष 24 अप्रैल को मनाया जाता है।[15] भारत में पंचायतीराज व्यवस्था महिला सशक्तिकरण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। इसने ग्रामीण महिला समाज को एक नई दिशा दी है।

पंचायतीराज ने वैचारिक स्तर पर ग्रामीण महिलाओं को अपने विषय में नए तरीके से सोचने को मजबूर कर दिया है। बस, बहुत हो गया अब और बर्दाश्त नहीं करेंगे। पुरुषों के पिछलग्गू बनकर नहीं रहेंगे। सदियों से यही सिलसिला चला आ रहा है। अब हम अपने फैसले खुद करेंगे। पुरुषों के मोहताज बन कर नहीं जिएंगे। पुरुष प्रधान मानसिकता के खिलाफ शहरों से चली यह हवा अब गाँवों में भी पहुँच चुकी है।[16] गाँव की दलित, गरीब परिवारों की महिलाओं को भी अपनी योग्यता का अहसास होने लगा है। आज ग्रामीण महिलाएं पंचायतीराज के माध्यम से अपने गाँवों से सम्बन्धित मुद्दों पर निर्णय प्रक्रिया में बढ़-चढ़कर भाग ले रही हैं। पंचायतीराज व्यवस्था में महिलाओं के लिए तैंतीस फीसदी आरक्षण की व्यवस्था है लेकिन बिहार, राजस्थान, छत्तीसगढ़, हिमाचल प्रदेश एवं उत्तराखण्ड में महिलाओं के लिए यह आरक्षण 50 प्रतिशत है। निस्संदेह इस व्यवस्था में जहां गाँवों की पिछड़ी, दलित, गरीब, अशिक्षित महिलाओं को राजनीतिक, सामाजिक पहचान मिली है वहीं शिक्षा, पानी, सड़क, स्वास्थ्य बिजली जैसे सार्वजनिक हित के मसले ग्राम पंचायतों की बैठकों में स्थान पाने लगे हैं।स्वामी विवेकानन्द ने विश्वमंच पर कहा था कि ''औरतों की स्थिति में सुधार लाये बिना कल्याण असम्भव है जैसे कि एक पंख से उड़ान भरना।''[17]

महिलाओं में आत्मसम्मान व आत्मविश्वास की भावना का विकास, आलोचनात्मक चिंतन की क्षमता, निर्णय लेने की क्षमता, विकास प्रक्रिया में समान भागीदारी, आर्थिक स्वतंत्रता, कानूनी ज्ञान तथा सुरक्षा, सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक जीवन के सभी क्षेत्रों में समान सहभागिता, सकारात्मक सोच जैसे मानकों की प्राप्ति महिला सशक्तिकरण है। इस प्रकार महिला सशक्तिकरण बहुआयामी विचारधारा है जो सभी क्षेत्रों में अपने जीवन को आकार प्रदान करने के लिए पसंद और कार्यवाही की स्वतंत्रता के विस्तार की ओर इशारा करती है।[18]

उसी प्रकार पंचायतीराज व्यवस्था साधन है और महिला सशक्तिकरण साध्य जिसका सीधा उद्देश्य राजनीति में महिला सहभागिता को बढ़ाना है किन्तु बहुआयामी उद्देश्य सर्वांगीण महिला विकास है। पंचायतीराज व्यवस्था के माध्यम से उन ग्रामीण महिलाओं का एक बड़ा समूह बन गया है जो किसी भी प्रकार से पंचायतीराज व्यवस्था (प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष) से जुड़ी हैं। इस प्रकार कड़ी से कड़ी और श्रृंखला से श्रृंखला जुड़ते हुए ग्रामीण महिलाओं के एक नवीन वर्ग का उदय हो रहा है जो महिला मतदाता के रूप में अपनी और अपने मत की कीमत को पहचानती है। राजनीतिक दल की सदस्य के रूप में सक्रिय हैं। प्रत्याशी के रूप में उत्साहित हैं तथा निर्वाचित सदस्य के रूप में ईमानदारी,कर्मठता तथा प्रतिबद्धत्ता के साथ उद्यमशील हैं।

शहरी तथा शिक्षित महिलाओं के लिए घर से बाहर की दुनियाँ में कदम रखना आसान था किन्तु ग्रामीण महिलाएं गाँव के बन्द दायरे तथा अशिक्षित संसार के स्याह अंधेरे में जीवन व्यतीत करने को मजबूर थी। किन्तु नवीन पंचायतीराज व्यवस्था ने अशिक्षित, गरीब, सदियों से उपेक्षित ग्रामीण महिलाओं के लिए आशा के द्वार खोले हैं। स्वतंत्रता के समय लोकतंत्रात्मक शासन प्रणाली, दलित व आदिवासियों के लिए आरक्षण की व्यवस्था जैसे निर्णय की प्रासंगिकता पर भी प्रश्न चिह्न लगाए गये थे आज वही प्रश्न चिह्न पंचायतीराज में महिलाओं की भागीदारी पर भी लगाए जा रहे हैं किन्तु ये पंचायतीराज की विकास प्रक्रिया का सामान्य चरण है। महिला आरक्षण की आलोचना भी की गई किन्तु समय-समय पर ग्रामीण महिलाओं ने अपनी योग्यता सिद्ध करके आलोचनाओं को करारा जवाब दिया है।[19] इस प्रकार केवल सदस्यों के स्तर पर

ही नहीं पंचायत अध्यक्ष के स्तर पर भी अनेक राज्यों में महिलाओं का प्रतिनिधित्व निर्धारित न्यूनतम अनुपात से ज्यादा रहा है। विभिन्न शंकाओं का निवारण करते हुए महिलाओं ने विभिन्न आपदाओं से पार पाकर अपनी योग्यता, कुशलता एवं क्षमता सिद्ध की है। और अपने आपको सशक्त बनाया है, यद्यपि अधिकांश महिलाएं अनपढ़ है तथा समाज की विभिन्न कुरीतियों का शिकार है। महिलाओं पर पितृ सत्तात्मक समाज का नियन्त्रण है इसके पश्चात् भी उन्होंने सामर्थ्य तथा विवेक से निर्णय लेने की क्षमता के कई ऐसे उदाहरण प्रकट किये जो यह स्पष्ट करते हैं कि देश की आधी आबादी को मुख्यकार्य क्षेत्र से अलग रखकर काम नहीं चलाया जा सकता है।

इन उपलब्धियों से सामाजिक परिर्वतन की झलक साफ दिखाई देने लगी है। अधिकांश महिलाएं अपने परिवेश तथा समाज सुधार और आस पास की समस्याओं को हल करने में उतनी ही दिलचस्पी ले रही हैं जितनी कि वे अपने परिवार के कल्याण में लेती हैं। पंचायत जैसी संस्थाओं में महिलाएं पुरुषों की तुलना में अधिक प्रभावी भूमिका निभा सकती हैं। पंचायतों में सभी स्तरों पर निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों के अनुभव रचनात्मक और निराशाजनक दोनों ही तरह के रहे हैं। यह तथ्य कि लगभग 10 लाख महिलाएं पहली बार सार्वजनिक जीवन में आई निश्चय ही भारतीय रूढ़िबद्ध समाज में एक लहर पैदा करता है। लेकिन राजनीतिक सशक्तिकरण के प्रथम प्रयोग एवं प्रयास पर शुरू से ही व्यापक प्रश्न चिन्ह लगाये गये हैं। यह कहा गया कि महिलाओं को यह अहसास ही नहीं होता कि निर्वाचित सदस्य होने का क्या अर्थ है और वे वही करतीं है जो परिवार के पुरुष कहते हैं। उन्हें ज्ञान नहीं कि महिला ग्राम प्रशासक के रूप में उनके अधिकार क्या हैं।

पंचायतीराज व्यवस्था में महिलाओं की सहभागिता पर आज अनेक प्रश्न उठ खड़े हुए हैं किन्तु यहाँ यह ध्यान रखना होगा कि यह महिलाओं की विफलता नहीं वरन उस समाज और उस व्यवस्था की विफलता है जिससे वे सम्बन्धित हैं। पंचायतीराज व्यवस्था के तहत कुछ ग्रामीण महिलाओं के आगे आने और विपरीत परिस्थितियों में अपनी जगह बनाने की कहानियाँ आश्वस्त तो करती हैं लेकिन मूल लक्ष्य अभी काफी दूर है। आज भी अनेक स्थानों पर पंचायतों में महिलाओं की उपस्थिति महज प्रतीकात्मक है। उनकी आड़ में उनके परिवार के पुरुष ही काम करते हैं और इस तरह से पंचायतीराज की मूल अवधारणा का मखौल उड़ाते हैं। कई महिला सरपंचों की शिकायत है कि स्थानीय प्रशासन तंत्र उनके साथ सहयोग नहीं करता और अनेक उपायों से उनका मनोबल तोड़ने की कोशिश करता है। अधिकांश महिला जन प्रतिनिधियों को राजनीति का कोई अनुभव नहीं होता इस प्रकार वे अपने पहले कार्यकाल में एक प्रकार से प्रशिक्षण प्राप्त करती हैं और दूसरे अवसर का इन्तजार करती हैं किन्तु दूसरे अवसर पर या तो चक्रानुक्रम (रोटेशन) पद्धत्ति के कारण चुनाव लड़ती ही नहीं है या फिर पराजित होकर घर बैठ जाती हैं जिससे उनके अनुभव से समाज व देश को कोई लाभ नहीं मिल पाता है। महिलाओं के राजनीतिक सशक्तिकरण के लिए उठाए गए कदम काफी निराशाजनक है। ये उसी प्रकार है जैसे कोई अनिश्चय की स्थिति में ही कोई निर्णय कर लेता है और बाद में पीछे हट जाता है। महिला सशक्तिकरण के पीछे पुरुष समाज की यही मानसिकता हावी है। महिला प्रतिनिधियों चुनाव के समय कुछ लोग हतोत्साहित व अभद्र व्यवहार करते हैं। पुरुष सचिव व प्रधान हर कार्य में अपनी मनमानी करते हैं और कई फैसलों की महिला सरपंच को जानकारी तक नहीं देते, जातिगत व दलगत राजनीति से महिलाओं के खिलाफ लोगों को विभाजित करते हैं। पंचायत से जुड़े हिसाब-किताब की जानकारी सरपंच तक को नहीं देते। अधूरे प्रस्तावों पर हस्ताक्षर करवाते हैं और फिर मनमाना भर लेते हैं। दलगत राजनीतिक से पंचायत वार्डों में काम होता है, इत्यादि अनेक ऐसे तथ्य हैं जो महिला की राजनीति सहभागिता को अक्रियाशील बना देते हैं किन्तु सभी जगह ऐसा ही हो यह आवश्यक नहीं है। अनेक महिला सरपंच प्रभावी भी हैं।

इसमें सन्देह नहीं कि समाज करवट ले रहा है। स्त्रियों में जागृति आ रही है। शिक्षा के प्रति रूझान बढ़ रहा है। पर्दाप्रथा विदाई के रास्ते पर है और महिलाओं की आवाज सशक्त हो रही है। किन्तु यात्रा बहुत लम्बी है। यह तो महिला सशक्तिकरण का पहला अध्याय मात्र ही है। सतही स्तर पर महिलाओं को आरक्षण देकर जहाँ उनकी भागीदारी को एक हद तक बढ़ावा मिला है वहीं राष्ट्रीय स्तर पर अभी बहुत कुछ करना शेष है। महिला सशक्तिकरण आज की आवश्यकता है तो पंचायतीराज उसे प्राप्त करने का एक माध्यम है जिस पर चल कर भारत की ग्रामीण महिलाओं ने अनेक उपलब्धियाँ अर्जित की हैं किन्तु मात्र निचले स्तर पर उन्हें थोड़ा सा आरक्षण देकर किसी चमत्कार की उम्मीद बेईमानी है। अत: आज आवश्यकता इस बात की है कि महिलाएं अपने सुषुप्त सर्वोत्तम को शिक्षा के माध्यम से उजागर करें। यदि नारी ने अपने सर्वोत्तम के विकास के लिए आवश्यक साधनों को नहीं अपनाया तो महिला सशक्तिकरण दम तोड़ देगा और उसके अभाव में देश, राष्ट्र व समाज भी अशक्त रह जाएगा। नारी अपने गर्भ में भविष्य को संजोकर रखती है। यदि आज की नारी शिक्षित, स्वस्थ, स्वावलम्बी व जागरुक होगी तभी भविष्य सशक्त होगा।

पंचायतीराज संस्थाओं में विभिन्न स्तरों पर आरक्षण के कारण एक और जहाँ सामान्य जाति वर्ग के एकाधिकार को समाप्त किया है वहीं दूसरी ओर जो बहुसंख्यक वर्ग आज तक इन संस्थाओं में अपनी भागीदारी नहीं निभा पा रहा था उसकी सक्रिय राजनीतिक व प्रशासनिक भागीदारी कायम हो गई है। पंचायतीराज संस्थाओं में जिला पंचायत एवं ग्राम स्तर पर नवीन अधिनियम के प्रावधान के अनुसार आरक्षण व्यवस्था सुनिश्चित हुई है। महिला जनप्रतिनिधियों को पंचायतीराज व्यवस्था में सम्मिलित करने वाले राजनीतिक प्रेरक, निर्णय लेने की क्षमता का विकास, विकास प्रक्रिया में भागीदारी, आर्थिक स्वतंत्रता, सूचना ज्ञान व कुशलता शिक्षा, महिला जागृति, महिलाओं की समस्याऐं एवं उनके निराकरण के उपाय, सामाजिक परिवर्तन, पारिवारिक सहयोग, घरेलू कार्य तथा सार्वजनिक पद के कर्तव्यों के मध्य सामंजस्य तथा पुरुषों का महिलाओं के प्रति दृष्टिकोण इत्यादि विषयों के सम्बन्ध में महिला जन प्रतिनिधियों से तथ्य एकत्रित करके उनका विश्लेषण किया गया है।

पंचायतीराज संस्थाओं में पंचायतीराज अधिनियम, 1994 से पूर्व तक अनुसूचित जाति, जनजाति तथा अन्य पिछड़ा वर्ग एवं महिलाओं के लिए समुचित प्रतिनिधित्व की व्यवस्था नहीं थी। वस्तुत: कोई भी प्रजातांत्रिक व्यवस्था तब तक सार्थक नहीं हो सकती जब तक उसकी निर्वाचन व्यवस्था के माध्यम से समाज के सभी वर्गों को शासन कार्यों में भागीदारी का सम्यक अवसर प्राप्त न हो।संविधान में 73 वें संविधान संशोधन अधिनियम के माध्यम से पंचायतीराज संस्थाओं में महिलाओं के लिए एक तिहाई पदों का प्रत्येक स्तर पर आरक्षण करने के कारण महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी का आंकलन करना विषयगत हो गया है।

पंचायतीराज व्यवस्था से जुड़ी महिला जन प्रतिनिधियों के सामने जो व्यक्तिगत बाधाएं खड़ी होती है उनमे से प्रमुख दस बाधायें घरेलू कार्यों का दबाव, सभाओं में जाने में संकोच, अशिक्षा तथा अज्ञानता, पूंजी की कमी, बाहर जाने में अमर्थता, पति द्वारा असहयोग, घर में छोटे बच्चे, महिला जनप्रतिनिधियों ने आत्मविश्वास की कमी को एक कारण बताया है। विरोधियों एवं परिवार द्वारा आलोचना तथा स्वयं या परिवार की अस्वस्थता को महिला जनप्रतिनिधियों ने अपने कर्तव्यों को निभाने में आने वाली व्यक्तिगत बाधाओं में माना है।

निष्कर्ष

अत: हम कह सकते हैं कि सभी वर्गों में सबसे बड़ी व्यक्तिगत समस्या घरेलू कार्यों के दबाव को माना है। सभाओं में जाने में संकोच, घर में छोटे बच्चे तथा शिक्षा की कमी को भी प्रमुख कारण माना है। इन आंकड़ों से प्रदर्शित होता है कि पुरुष समाज की सोच में कोई परिवर्तन देखने को नहीं मिल रहा। महिलाओं ने घर से बाहर निकलने की हिम्मत तो की है किन्तु पुरुष समाज उनकी घरेलू जिम्मेदारियों में हाथ बंटाने को तैयार नहीं। महिला जनप्रतिनिधि अपने घर परिवार की जिम्मेदारियों, बच्चों की परवरिश तथा आर्थिक रूप से असमर्थता के कारण सशक्त महसूस नहीं करती। वे अपनी इन्हीं असमर्थताओं के चलते पंचायतीराज संस्थाओं को अपनी योग्यता का 100 प्रतिशत नहीं दे पा रहीं है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. भगवती, स्वामी, किशोर, सविता, महिला सशक्तिकरण क्यों और कैसे, आर.बी.एस.ए. पब्लिशर्स, जयपुर, 2008, पृ.सं. 36
2. नैन्सी कोट, द ग्राउंडिंग ऑफ मॉडर्न फेमिनिज्म, न्यू हेवन येल यूनिवर्सिटी मेल प्रेस, 1987
3. कौशिक, डॉ. आशा, नारी सशक्तिकरण, विमर्श एवं यथार्थ, पोईन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, 2004, पृ.सं. 257
4. भारद्वाज, डॉ. कल्पना, महिला सशक्तिकरण : चुनौतियों का संदर्भ सामाजिक आर्थिक एवं राजनीतिक आयाम ''जयपुर नगर निगम'' का विशिष्ट संदर्भ, अप्रकाशित लघु शोध प्रतिवेदन, 2008
5. कुमार, मनीष, महिला सशक्तिकरण, दशा और दिशा, मधुर बुक्स, दिल्ली, 2008, पृ.सं. 3
6. पामेंचा, डॉ. रेणुका, महिला सशक्तिकरण क्यों और कैसे, लेख, पृ.सं. 167-171
7. सहाय, सुषमा, वूमन एण्ड एमपावरमेंट, डिस्कवरी पब्लिकेशन हाउस, दिल्ली, पृ.सं. 17
8. अन्सारी, एम.ए., महिला और मानवाधिकार, ज्योति प्रकाशन, जयपुर, 2000, पृ.सं. 11
9. कौशिक, प्रो. आशा, भारत में महिला सशक्तिकरण दशा और दिशा, पोईन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, पृ.सं. 37
10. टुवर्डस इक्वेलिटी, रिपोर्ट ऑफ द कमेटी ऑन स्केट्स ऑफ वीमन इन इंडिया, भारत सरकार, समाज कल्याण विभाग, शिक्षा व समाज कल्याण मंत्रालय, दिसम्बर, 1974
11. बिहार, राजस्थान, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, हिमाचल प्रदेश एवं उत्तराखण्ड में महिलाओं के लिए यह आरक्षण 50 प्रतिशत है।
12. हक्सर, नंदिता, कानून में महिलाओं के लिए दोहरी मान्यताएँ
13. कौशिक, प्रो. आशा, नारी सशक्तिकरण विमर्श एवं यथार्थ, पूर्वोक्त, पृ.सं. 111
14. जैन, विद्या, महिलाओं की सत्ता में भागीदारी : भारतीय अनुभव, राज्य शास्त्र समीक्षा, राजनीति विज्ञान, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, 1-2 जनवरी, दिसम्बर 2000

15. कुमार, मनीष, महिला सशक्तिकरण : दशा और दिशा, मधुर बुक्स, दिल्ली, 2008, पृ.सं. 14
16. जोशी, आर.पी., मंगलानी, रूपा एवं शर्मा, प्रज्ञा, महिला विकास व सशक्तिकरण, पृ.सं. 125, जयपुर
17. स्वामी भगवती, सविता किशोर, महिला सशक्तिकरण क्यों और कैसे, पूर्वोक्त, पृ.सं. 109
18. भार्गव, डॉ. बी.एस., भार्गव, के.सी., विध्या के.सी. विध्या, पॉजिशन ऑफ वूमन इन पोलिटिक्स इंन्स्टीट्यूशन जरनलस ऑफ रूरल डवलपमेट VOL II, 5 सितम्बर,, 1992, पृ.सं. 618
19. बत्रा, वी.के., स्थानीय निकायों में महिलाओं की भूमिका, रोजगार समाचार, दिल्ली, 28 जून - 4 जुलाई, 1997 पृ.सं. 2
20. विकास परिचर्चा, अंक 14-15, व्यावहारिक शोध विकास संस्थान, लखनऊ, जनवरी- दिसम्बर, 2000, पृ.सं. 4-5